Research Ambition ISSN: 2456-0146
An International Multidisciplinary e-Journal
(Peer - reviewed, Open Accessed & Indexed)
Web: www.researchambition.com Email: publish2017@gmail.com
Vol. 4, Issue-IV
Feb. 2020

1857 का विद्रोह और इतिहासकार हरप्रसाद चट्टोपाध्याय द्वारा विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ० अनुज कुमार
नेट, सह पी.एच.डी., इतिहास विभाग पटना।
DOI: https://doi.org/10.53724/ambition/v4n4.04

संक्षिप्त रूपः

1857–58 की जनक्रांति के संबंध में आर०सी० मजुमदार, सुरेंद्रनाथ सेन, के०के० दत्त एवं ताराचंद जैसे प्रमुख भारतीय इतिहासकारों की तरह हरप्रसाद चट्टोपाध्याय एवं शशिभूषण चौधरी ने इस घटना पर इतिहास–लेखन की आवश्यकता महसूस की। मजुमदार और सेन की भाँति चट्टोपाध्याय द्वारा इस विद्रोह पर किए गए इतिहास–लेखन को वर्ष 1957 में विद्रोह की शताब्दी के अवसर पर प्रकाशित किया गया। इस घटना के लेखन–कार्य में चट्टोपाध्याय ने सभी पहलुओं को सहेजने का यथासंभव प्रयास किया है। प्रस्तुत शोध–लेख इस विद्रोह पर चट्टोपाध्याय के द्वारा किए गए इतिहास लेखन के विश्लेषण किए जाने के साथ अन्य इतिहासकारों एवं बुद्धिजीवियों द्वारा इस घटना पर किए गए इतिहास लेखन या अभिव्यक्त विचारों के साथ यथास्थान तुलनात्मक अध्ययन भी है।

शब्द कुंजीः– लेख के अंतर्गत 1857 के विद्रोह पर चट्टोपाध्याय द्वारा किए गए इतिहास लेखन में इस विद्रोह के कारण, स्वरूप और परिणाम का विश्लेषण तथा अन्य प्रमुख इतिहासकारों एवं बुद्धिजीवियों द्वारा इस घटना पर अभिव्यक्त विचारों के साथ तुलनात्मक अध्ययन है।

इस विप्लव के कारणों, स्वरूप एवं प्रभावों के संबंध में विचारों में काफी समानता होने के बावजूद कई मायने में भिन्नताएँ भी दृष्टिगोचर होती हैं। इस घटना के कारणों के विश्लेषण में जहाँ चट्टोपाध्याय ने सामाजिक–धार्मिक हस्तक्षेपों के साथ ही औपनिवेशिक आर्थिक लूटों को भी विशेष तरजिह दिया है वहीं चौधरी ने सामाजिक–धार्मिक कारकों को खास अहमियत न देकर साम्राज्यवादी शोषणमूलक आर्थिक नीतियों तथा राजनीतिक असंतोषों को वरियता प्रदान की है। इस विद्रोह के स्वरूप के बारे में जहां चट्टोपाध्याय के विश्लेषण कई बातों में मजुमदार से संबंध रखता है वहीं दूसरी ओर सेन के विचारों को भी पुष्टि प्रदान करता है। जबकि चौधरी का विचार मार्क्स, सावरकर, के०के० दत्त और ताराचंद के इतिहास–लेखन के काफी करीब है। प्रभावों के संबंध में दोनों का विचार लगभग समान है। आगे चट्टोपाध्याय के साथ अन्य इतिहासकारों के दृष्टिकोणों में समानताओं और असमानताओं के विशद विश्लेषण से स्पष्ट होगा कि इस समानता के बावजूद इतिहासकारों के इस विद्रोह के विभिन्न पहलुओं के चित्रण में मौलिक अन्तर था।

1857–58 के विद्रोह के भारतीय इतिहासकारों में एच०पी० चट्टोपाध्याय के योगदान का इस दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है चूँकि वे भी मजुमदार की तरह इस विद्रोह को मूलतः सैनिक क्रांति मानते हैं। उनकी राय में 1857–58 की क्रांति की पहली आँधी खासतौर पर बंगाल में उठी।[1] बंगाल के विभिन्न सैनिक छावनियों जैसे

दमदम, ब्रह्मपुर एवं बैरकपुर में विद्रोह के पूर्व अंग्रेजी कम्पनी की सरकार के खिलाफ नफरत एवं अशांति का माहौल बन चुका था और यही विद्रोह के प्रस्फूटन का कारण बना। बंगाल से उत्पन्न इस विद्रोह की तूफान बिहार में होते हुए उत्तर पश्चिमी प्रातों, सागर एवं नर्मदा के के प्रदेशों तथा विंध्य के पार के भू–भाग पर अपना प्रभाव दिखाया।

एच०पी० चट्टोपाध्याय की राय में सैनिकों के बीच असंतोष के पहले से कई कारण मौजूद थे।[2] अपनी ओर से हर तरह से वफादारी दिखाये जाने के बावजूद इन भारतीय सिपाहियों को अंग्रेज सिपाहियों की तुलना में असमानता का सामना करना पड़ता था। विगत वर्षों में इन सैनिकों को कई बार अंग्रेजी साम्राज्य के विस्तार एवं सुरक्षा के दृष्टिकोण से समुद्र पार विदेशों में भेजा गया था। सामाजिक क्षेत्र में विभिन्न प्रकार के सुधारों, नियमों/अधिनियमों के कारण जाति एवं धर्म के प्रति समर्पित सिपाहियों में आक्रोश व्याप्त था।

यद्यपि इस सैनिक असंतोष का मूल कारण कम्पनी की सरकार द्वारा इनकी जाति व्यवस्था एवं धार्मिक क्षेत्र में दखलअंदाजी किया जाना था[3]; किन्तु चर्बी वाले कारतूस के प्रयोग से उत्पन्न तात्कालिक आक्रोश को जिस रूप में उन्होंने रेखांकित करने का प्रयास किया है, उससे यह लगता है कि उनकी राय में यह तात्कालिक कारण ही सर्वोपरि था। 29 मार्च 1857 के दिन 5वीं कम्पनी, 34वीं रेजिमेंट, बंगाल नेटिव इंफैंट्री के 1446 नम्बर जवान मंगल पांडे ने ग्रीज्ड कारतूस के मुद्दे पर गोली चलाकर क्रांति का संकेत दिया।

इस घटना की पृष्ठभूमि की चर्चा करते हुए एच०पी० चट्टोपाध्याय ने यह विचार रखा कि लार्ड डलहौजी और लार्ड केनिंग जैसे सर्वोच्च अंग्रेजी पदाधिकारियों को भी इस विद्रोह के बारे में पहले से ही संकेत मिल रहा था।[4] विगत वर्षो में डलहौजी द्वारा अपनायी गयी हड़प की नीति, अवध का विलय तथा सामाजिक एवं धार्मिक मामलों में किये गये हस्तक्षेप ने विद्रोह की पृष्ठभूमि तैयार की।

ऐसे ही असंतोषों की पृष्ठभूमि में जनवरी 1857 से ही दमदम में यह अफवाह फैल रहा था कि ग्रीज्ड कारतूस में गाय एवं सूअर की चर्बी का प्रयोग हिन्दू तथा मुसलमान दोनों का धर्म भ्रष्ट करने के मद्देनजर ब्रिटिश सरकार द्वारा किया गया है। चट्टोपाध्याय के मुताबिक इस अफवाह ने वहाँ कार्यरत दोनों वर्गों के सैनिकों को आशंकित कर दिया। 23 जनवरी 1857 को दमदम के सैनिकों ने इस अपवित्र कारतूस को लेने से इंकार कर दिया। इस घटना के परिणामस्वरूप ब्रह्मपुर एवं बैरकपुर के सैनिकों ने भी गोली के प्रश्न पर असंतोष प्रकट की। इस प्रकार 22–23 जनवरी 1857 को दमदम में कारतूस के मुद्दे पर हुए उथल–पुथल ने क्रमशः ब्रह्मपुर एवं बैरकपुर के 19वीं एवं 34वीं रेजिमेंट के सैनिकों को विद्रोह के लिए अभिप्रेरित किया। इन दोनों रेजिमेंटों में उच्च वर्ग के सिपाहियों का प्रभुत्व था और यही कारण था कि ये दो रेजिमेंट ही ब्रिटिश सरकार की ओर से जातीय एवं धार्मिक व्यवस्था में दखलअंदाजी किये जाने के खिलाफ सर्वप्रथम सशस्त्र विरोध का अवसर प्राप्त किया।[5]

बंगाल विद्रोह का प्रभाव अवध एवं अन्य क्षेत्रों पर भी पड़ा। मात्र तीन महीने के भीतर ही इस विद्रोह ने लखनऊ, मेरठ, दिल्ली, बरेली, झांसी, इलाहाबाद, दानापुर, शाहाबाद, निमच, कोटा, करनाल आदि विभिन्न केन्द्रों को अपने प्रभाव में ला दिया। हरप्रसाद चट्टोपाध्याय ने विद्रोहियों द्वारा दिल्ली को विद्रोह का मुख्य अड्डा बनाने के कारणों में उसकी भौगोलिक स्थिति एवं सैनिक लाभों को सर्वोपरि माना है। मेरठ एवं दिल्ली के विप्लव की सूचना ने उत्तर पश्चिम सीमा प्रांत के विद्रोही ज्वर को उत्पन्न किया।

चट्टोपाध्याय के विचार में उन क्षेत्रों में विद्रोह अधिक भयंकर रूप धारण किया जहाँ स्थानीय कारण अधिक प्रबल थे। इन क्षेत्रीय कारणों ने क्रांति के स्थानीय विशेषताओं को उजागर किया। उनकी राय में लगभग समस्त उत्तर पश्चिम प्रांत, बुंदेलखण्ड, अवध, सागर एवं नर्मदा के प्रदेश, पश्चिम बिहार एवं छोटानागपुर में इस विद्रोह ने लोकप्रिय आयाम ग्रहण किया। इन क्षेत्रों में विद्रोही सैनिकों एवं सर्वसाधारण की भागीदारी एक समान रही।[6] अवध जो बंगाल की सेना का नर्सरी था[7] को ब्रिटिश साम्राज्य में मिलाये जाने के बाद से ही असंतोष का ज्वर बड़े पैमाने पर मौजूद था एवं कारतूस वाली घटना ने लखनऊ के सिपाहियों को विद्रोह के लिए प्रेरित किया। पश्चिम बिहार के विभिन्न भागों में विद्रोह को प्रबल समर्थन मिलने के पीछे भी स्थानीय कारण ही जिम्मेदार थे।

आर०सी० मजुमदार की भांति चट्टोपाध्याय का मानना है कि झांसी की रानी लक्ष्मीबाई, कुँवर सिंह, नाना साहब, बेगम हजरत महल, मुगल सम्राट बहादुर शाह जफर आदि नेताओं ने इस विद्रोह में व्यक्तिगत या क्षेत्र–विशेष के कारणों से प्रभावित होकर शामिल हुए थे। जहाँ तक इन नेताओं को जन–समर्थन मिलने की बात है तो उस समय स्थानीयता की भावना प्रबल थी एवं क्षेत्र–विशेष की समस्याओं को ही अपनी समस्या मानने की प्रवृति लोगों के बीच विद्यमान था।

एस० एन० सेन की तरह चट्टोपाध्याय का विचार है कि यदि ब्रिटिश सरकार द्वारा उन देशी सैनिक छावनियों के जहाँ प्रारम्भ में विद्रोह नहीं हुए थे, सिपाहियों को समय रहते शस्त्रविहीन नहीं किया जाता तो इस विद्रोह का प्रसार और अधिक हुआ होता। जिन क्षेत्र–विशेष में असंतोष के चिह्न उभरते थे, देशी सैनिकों को तुरंत कब्जे में कर लिया जाता था। उनकी राय में हैदराबाद में भी विद्रोह के तनाव भारी पैमाने पर मौजूद थे लेकिन वहाँ के निजाम और उसके मंत्री सलारजंग की अंग्रेजी सरकार के प्रति वफादारी के चलते विद्रोह नहीं हो सका। अंग्रेजों की थोड़ी–सी गलती हैदराबाद को लखनऊ में बदल देती और यह दक्कन का दूसरा अवध बन जाता।

1857 के विद्रोह का प्रसार देश के विभिन्न भागों में जंगल की आग की तरह हुआ। इस विद्रोह की शुरूआत ही उन सैनिकों द्वारा किया गया जो एकाएक खड़े हुए और संघर्ष को भड़काया।[8] जैसे–जैसे विद्रोह प्रगति की ओर अग्रसर हुआ, संघर्ष के विभिन्न केन्द्रों–उत्तर, पूरब और मध्य भाग के संघर्ष रंगालयों में आम वर्ग के असंतुष्ट तत्वों ने योगदान देकर विद्रोह को मजबूती प्रदान की।

इस विद्रोह के सामाजिक पृष्ठभूमि की चर्चा में हरप्रसाद चट्टोपाध्याय ने बतलाया है कि कंपनी की सरकार द्वारा भारतीय लोगों के जातीय और धार्मिक क्षेत्रों में अवरोध खड़ा किये जाने के चलते एक बड़ा तबका ब्रिटिश विरोधी बन चला था। इनके मुताबिक सती प्रथा की समाप्ति, बाल हत्या पर प्रतिबंध लगाया जाना, धर्म परिवर्तन को मान्यता प्रदान किया जाना एवं विधवा पुनर्विवाह को पारित किये जाने के अलावा रेलवे, डाक, तार आदि संचार के साधनों की शुरूआत और विस्तारीकरण– की घटनाओं ने भारतीय जनसाधारण के बीच बड़े पैमाने पर असंतोष उत्पन्न किया। उद्धरण के तौर पर राजा राधाकांत देव, राजा कालि कृष्णा बहादुर एवं काशीनाथ मलिक की ओर से इन हस्तक्षेपों के विरोध में सौंपी गयी याचिकाओं एवं डलहौजी के हरिद्वार यात्रा को रखते हुए चट्टोपाध्याय ने जिक्र किया है कि इन नेताओं ने बंगाल, बिहार एवं उड़ीसा की जनता की ओर से यह मांग की थी कि यदि सरकार इन कानूनों का अंत नहीं करती है तो अशांति को बुलावा देगी। इसी प्रकार जब डलहौजी ने गंगा पर निर्मित नहर को

देखने हरिद्वार पहुँचा था तो उसने वहाँ के परंपरावादियों के बीच विद्यमान असंतोष को देखा था। वहाँ के लोगों का मानना था कि गंगा के ऊपर कृत्रिम नहर का निर्माण करके अंग्रेजी सरकार ने इस नदी को अपवित्र कर दिया है।[9]

मार्क्स की भांति चट्टोपाध्याय का मानना है कि अवध के शक्तिशाली तालुकेदारों की जमीन को छीन कर अंग्रेजों ने लगभग बीस हजार लोगों को उनके पेशे से वंचित कर दिया वहीं दूसरी ओर ग्वालियर के देशी सैनिकों की संख्या को सीमित करके चालीस हजार से नौ हजार पर ला दिया गया। चट्टोपाध्याय ने स्पष्ट शब्दों में इस बात पर बल देते हुए कहा कि इस प्रकार बेदखल किये गये तालुकेदारों, उनके सेवकों एवं सैनिकों ने विद्रोह के अवसर पर अंग्रेजी सरकार का कड़ा प्रतिरोध किया। विद्रोह के पूर्व सामाजिक अशांति में उतरोत्तर वृद्धि होती जा रही थी वहीं दूसरी ओर खास तौर पर बंगाल और मद्रास के ग्रामीण क्षेत्रों में बढ़ती हुई गरीबी और आर्थिक कठिनाइयों ने विद्रोह को प्रबल बनाया।

इसाई मिशनरियों द्वारा भारत के गवर्नर जनरल को प्रस्तुत किये गये स्मरण पत्रों को चट्टोपाध्याय ने उद्धत किया है : "बंगाल के बहुसंख्यक जिलों में न तो संपत्ति सुरक्षित है और न ही जीवन। आए दिन वहाँ लूट–पाट एवं हिंसात्मक गतिविधियाँ जारी हैं।" इन स्मरण–पत्रों में उपर्युक्त वर्णित सभी दोषों का जिम्मेवार अंग्रेजी न्याय विभाग की अक्षमता एवं पुलिस निरंकुशता को ठहराया गया था। बंगाल के आम लोगों की दयनीय स्थिति में सर्वोच्च स्थान नयी जमींदारी व्यवस्था को इन मिशनरियों ने दिया था। जमींदारी व्यवस्था ने बंगाल में रिश्वतखोरी को बढ़ावा दिया और न्याय की हत्या की। इसी प्रकार मद्रास में भी शोषणपरक नीतियाँ लागू थी और उसका सर्वोत्तम स्त्रोत 'टार्चस रिपोर्ट इन मद्रास' है।[10]

अंग्रेजी सरकार द्वारा भारत के विविध क्षेत्रों में आरोपित किये जा रहे नीतियों को दृष्टिगत करते हुए चट्टोपाध्याय ने कहा कि इनके आधार पर जो प्रशासनिक व्यवस्था संचालित की जा रही थी, उसने न केवल सामाजिक–धार्मिक अंतर्विरोधों को पैदा किया अपितु आर्थिक असंतोष भी उत्पन्न किया। यह आर्थिक विक्षोभ सरकारी तंत्र के भूराजस्व नीति का प्रतिफल था और इसने दोनों वर्गों किसानों एवं जमींदारों को समान रूप से प्रभावित किया। अंग्रेजी सरकार की इस प्रकार की सामाजिक–आर्थिक नीति ने इस देश के सभी वर्गों को विद्रोह के पहले आच्छादित कर लिया था और इसी का परिणाम 1857–58 का विद्रोह था।

अंग्रेजी नौकरशाहों के दुर्व्यवहार इस विद्रोह का अन्य प्रमुख कारण बना। अंग्रेजों द्वारा हिन्दुस्तानियों को ब्रिस्टली निगर्स से अधिक महत्व नहीं दिया जाता था और इनकी ओर से ऐसी अनुचित तथा अमानवीय हरकतें की जाती थी जिसे सुनना भी असंभव हो चला था। इसमें दो राय नहीं कि अंग्रेजी सरकार के सामाजिक और आर्थिक सुधारों, मिशनरी गतिविधियाँ, देशी राज्यों का अधिग्रहण एवं यहाँ के निवासियों के साथ अंग्रेजी अफसरों द्वारा किये जा रहे कठोर भेदभाव ने विस्तृत पैमाने पर असंतोष को उत्पन्न किया था; परंतु इसके बावजूद 1857 के विद्रोह का प्रस्फूटन नहीं हुआ होता यदि देशी सिपाहियों द्वारा इस विद्रोह की शुरूआत नहीं की गयी होती कारण आम भारतीय खुला विद्रोह के तौर–तरीके से अनभिज्ञ थे और यह अवसर देशी सैनिकों को ही प्राप्त हुआ। यहाँ मार्क्स के इस विचार–'1857 की क्रांति अन्य विद्रोहों से अलग था क्योंकि पहली बार सैनिकों ने खुलेआम सशस्त्र प्रतिरोध किया था'– का समर्थन होता है।[11]

भारत में आधुनिक ढंग के सिपाहियों की नियुक्ति पर प्रकाश डालते हुए चट्टोपाध्याय ने उजागर किया है कि यद्यपि सर्वप्रथम यूरोपीय कारखाने एवं भंडारगृहों की सुरक्षा के दृष्टिकोण से सशस्त्र रात्रि प्रहरी, रक्षक आदि के रूप में भारतीयों की नियुक्ति की गयी थी तथापि वास्तविक सैनिकों की भर्त्ती पहली मर्तबा दक्षिण भारत के उन युद्धप्रिय वर्गों से की गयी जो वेतन और भत्ते के बदले लड़ने को हमेशा तत्पर होते थे। डॉडवेल के विचार : "देशी सैनिकों की खोज न केवल भारत के पूर्वी तटों से किया गया बल्कि उनकी खोज पश्चिमी तटों से भी किया गया था। सिपाही शब्द का प्रचलन पहली बार 1740 में अस्तित्व में आया परन्तु आधुनिक रूप में इनका अवतरण 1765 में ही हुआ।"[12]

देशी सैनिकों के वेश–भूषा, खान–पान, रहन–सहन एवं वेतन भुगतान से लेकर अंग्रेजी सरकार द्वारा विभिन्न समयांतरालों में उनके ऊपर आरोपित किये जाने वाले कठोर नियमों की विस्तारपूर्वक चर्चा करके चट्टोपाध्याय ने उसे जीवंतता प्रदान किया है। अपने जीवन से लापरवाह युवक सिपाही में भर्ती होने के बाद विभिन्न प्रकार के बंधनों से जकड़ दिया जाता था। दरअसल चमड़े के जूते, कोट–पायजामा, मस्केट एवं बैनेट आदि के भार से इनके शरीर को इतना बोझिल बना दिया जाता था कि उनका जीवन–प्रणाली हीं उबाऊ बन चुका था। चट्टोपाध्याय का मानना है कि सभी प्रकार के आरोपित नियमों को मानने के बावजूद भी इन देशी सैनिकों को मात्र सात (7) रूपये मासिक मिलता था और सोलह एवं बीस वर्षों के उपरांत इनके वेतन में क्रमशः एक और दो रूपया जोड़ा जाता था। इस प्रकार इनका अधिकतम वेतन मात्र नौ रूपया था। यद्यपि देशी कैवलरी सैनिकों का वेतन सत्ताइस रूपया मासिक था किंतु इनमें पंद्रह रूपया घोड़े पर एवं अन्य खर्चों के लिए प्रतिमाह कटौती करके इनको मात्र नौ रूपया छः आना ही वेतन भुगतान किया जाता था। इसमें भी इन सैनिकों का वेतन भुगतान एकमुश्त नहीं किया जाता था बल्कि माह के विभिन्न तिथियों को अलग–अलग किश्तों में दिया जाता था। इस प्रकार देशी सैनिकों के बीच घोर आर्थिक समस्याएँ मौजूद थे।[13]

देशी सैनिकों की दयनीय आर्थिक हालात की चर्चा को आगे बढ़ाते हुए चट्टोपाध्याय ने उजागार किया है कि मद्रास के सिपाहियों की स्थिति और भी बदत्तर थी। उनको पोषक तत्वों से पूर्ण भोजन की प्राप्ति नहीं होती थी। हार्वे द्वारा संग्रहित तथ्यों को प्रमाण के तौर पर रखते हुए चट्टोपाध्याय ने बतलाया है कि उनके खान–पान की सामग्रियों में उबाला गया चावल (भात) और थोड़ी–सी कढ़ी (नमक मिला माड़) प्रमुख था। केवल (बिना तेल मशाला के) नमक से बना हुआ मछली ओर मांस किसी खास अवसर पर ही इन हिंदुस्तानी सैनिकों को मिलती थी। वह पानी जिसमें चावल उबाला जाता था में नमक मिलाकर और प्याज के कुछ टुकड़े इनके भोजन में परोस दिया जाता था। इनको नाश्ता में परेड के बाद केवल एक कप बटर मिल्क दिया जाता था और दोपहर के भोजन में एकमात्र छूछे माड़–भात–नमक। बॉम्बे प्रेसिडेंसी और उत्तर भारत में भी स्थिति इससे बेहतर नहीं थी। चट्टोपाध्याय ने जोरदार शब्दों में कहा कि आगे चलकर इन भूखमरे सैनिकों के पत्रों पर जब डलहौजी ने स्टाम्प शुल्क का आरोपण किया तो वे बौखला उठें। यद्यपि यह एक छोटी रकम थी किंतु सैनिकों ने अपनी स्वतंत्रता के ऊपर इसे एक आघात समझा। जिन सैनिकों को अपनी परिवारों की सहायता हेतु मात्र चौदह शिलिंग मासिक दिया जाता हो, जिनके परिवार सैकड़ों मील दूर रहता हो, अपने जीवन के सभी दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति करना हो– ऐसे सैनिको के द्वारा डलहौजी के शासन को मानने से इंकार कर दिया था।[14]

जहाँ एक ओर एच०पी० चट्टोपाध्याय ने इस विद्रोह के इतिहास लेखन में सभी प्रकार के सैनिक असंतोषों का सजीव बारीक विश्लेषण किया है वहीं दूसरी तरफ इन सैनिकों के बीच अंग्रेजी सरकार विरोधी प्रबल उबाल और अदम्य साहस का यथार्थ चित्रण करके सैनिक विक्षोभों के सम्पूर्ण इतिहास–लेखन में अद्‌भुत विलक्षणता का परिचय भी दिया है। यही कारण है कि सभी वर्गों के बीच मौजूद असंतोष को उन्होंने एक समान तो माना किंतु इस विद्रोह के शंखनाद के सौभाग्य का श्रेय इन देशी सिपाहियों को ही दिया है।

अंग्रेजी सरकार द्वारा देशी सिपाहियों के ऊपर अनुचित ढंग के नियमों को आरोपित करने एवं नई सैनिक आविष्कारों को प्रचलित किये जाने की घटना ने इनके बीच ब्रिटिश विरोधी नफरत को चरम–सीमा पर पहुँचा दिया। इनफिल्ड राइफल और ग्रीज्ड युक्त कारतूस की घटना ने तो केवल पहले से विद्यमान आक्रोश को उभरा। चट्टोपाध्याय का मानना है कि कारतूस सम्बन्धी सूचना को सर्वप्रथम दमदम डिपॉट के एक खलासी ने प्रचारित किया था। इस खलासी ने एक ब्राह्मण सिपाही से उसके लोटा से पानी पीने की अनुमति मांगी तो उस ब्राह्मण ने जातीय आधार पर जब इस आग्रह को ठुकरा दिया तब प्रतिक्रिया में उस खलासी ने व्यंग्यपूर्वक जवाब दिया कि उनकी जाति जल्द ही भ्रष्ट होनेवाली है। शीघ्र ही उनको उस ग्रीज्डयुक्त कारतूस को अपनी दांतों से काटना पड़ेगा जिसका निर्माण गौ एवं सूअर की चर्बी से किया जा रहा है। तुरंत ही उस ब्राह्मण सिपाही ने इस सूचना को समस्त दमदम डिपॉट में प्रचारित कर दिया और इस घटना ने बैरकपूर के देशी सैनिकों के बीच विस्फोट के खदान का निर्माण किया। कारतूस सम्बन्धी सूचना न केवल दूसरे सैनिक पड़ावों तक पहुँची बल्कि इस असुखद समाचार ने शीघ्र ही सम्पूर्ण भारत को आच्छादित कर लिया था।

एच०पी० चट्टोपाध्याय की राय में देशी सैनिकों के बीच विद्यमान वह विद्रोही चेतना जो दमदम और बैरकपुर के सैनिक छावनियों में ठहरे हुए देशी सैनिकों के दिलो–दिमाग में गहरी पैठ जमा ली थी, का प्रसार ब्रह्मपुर के सैनिकों के बीच हो चला था। इसका ही परिणाम था कि 26 फरवरी 1857 के शाम ब्रह्मपुर की देशी सेनिकों ने तोपों को लेने से इंकार कर विद्रोह की शुरूआत किये थे। ब्रह्मपुर के सैनिकों के बीच जोरो से उफनता नफरत एवं इनकी अप्रतिम शूरता को उजागर करते हुए चट्टोपाध्याय ने लिखा है कि इन सैनिकों के ऊपर अंग्रेजों द्वारा चीन और बर्मा भेजे जाने और वहाँ सभी लोगों को मरने की लाख धमकी दिये जाने एवं रानी की 84वीं रेजिमेंट को रंगून से बुलावा भेजे जाने के बावजूद भी कोई असर नहीं पड़ा और 4 मार्च 1857 को इन सैनिकों ने पुनः विद्रोह कर दिया। इन ब्रह्मपुर के सैनिकों को बैरकपुर भेजे जाने के पहले ही भारतीय क्रांति का प्रथम खून बहाया जा चुका था। 29 मार्च 1857 को मंगल पांडे की गोली–बारी ने सिपाही विद्रोह के लिए हरी झंडी दिखाई।[15] यह गौरतलब है कि मजुमदार द्वारा इन सैनिकों की निःस्वार्थ बलिदान पर लगाया गया लांछन चट्टोपाध्याय के लेखन से स्वतः निष्प्राण हो जाता है और इन हिंदुस्तानी सैनिकों के दंश–दर्द तथा इनके उदात उद्‌देश्य उजागर होते हैं।

ब्रह्मपुर और बैरकपुर के सैनिक विद्रोहों ने प्रकाश की गति से मेरठ विद्रोह को जन्म दिया। मेरठ के इस विद्रोह ने उत्तर–पश्चिम प्रांतों को विद्रोह में धकेला और इसकी छाया बिहार पर भी पड़ा। बिहार में विप्लव की शुरूआत और मिली लोकप्रियता के पीछे जिम्मेवार प्रमुख कारणों पर प्रकाश डालते हुए चट्टोपाध्याय ने बतलाया है कि यह प्रांत बंगाल सेना की भर्ती किये जाने का प्रमुख केन्द्र था। इस प्रांत से भर्ती किये गये सैनिकों की नियुक्ति

उसी प्रांत में भी की जाती थी। उदाहरणार्थ दानापुर छावनी के सैनिकों की नियुक्ति शाहाबाद जिले के लोगों से की गयी थी। चट्टोपाध्याय ने जोरदार शब्दों में कहा कि शाहाबाद के भोजपुरी बोलनेवाले लोगों ने हिन्दुस्तान को लड़ाकू राष्ट्र के रूप में निर्मित किया। उन्होंने हिस्दुस्तानी सैनिकों की भर्ती का एक गहरी खदान का निर्माण किया एवं 1857 के विद्रोह में सर्वथा उल्लेखनीय भूमिका अदा की। बिहार के विभिन्न क्षेत्रों से भर्ती किये गये सैनिकों के बीच विद्रोही सैनिक दोस्तों के प्रति स्वभाविक सहानुभूति थी और बिहार का विद्रोह इसी सहानुभूति का परिणाम था।[16] इस प्रकार यह स्पष्ट है कि चट्टोपाध्याय ने कारणों के अपने विश्लेषण में सैनिकों के बीच व्याप्त असंतोष को प्रमुख रूप से दिखलाने का प्रयास किया है। यह भी उल्लेखनीय है कि सैनिक विक्षोभों से संबंधी चट्टोपाध्याय का विश्लेषण सेन की व्याख्या के काफी नजदीक है। चट्टोपाध्याय के मुताबिक यद्यपि भारत के एक बड़े हिस्से में इस विद्रोह ने एक लोकप्रिय जनविद्रोह का स्वरूप प्राप्त किया और जिन प्रदेशों में इसे लोकप्रियता नहीं मिली उन क्षेत्रों में भी यत्र–तत्र सैनिक विद्रोह हुए लेकिन कुछ क्षेत्र–विशेष अभी भी शांत रहे। इस प्रकार सम्पूर्ण भारत के आधार पर इस विद्रोह को लोकप्रिय विद्रोह नहीं कहा जा सकता है। आगे मजूमदार की तरह चट्टोपाध्याय ने लिखा है कि इस विप्लव ने क्षेत्र–विशेष से प्रादेशिक स्तर पर लोकप्रियता हासिल की। इनका मानना है कि आमलोगों द्वारा राजनीतिक स्वतंत्रता प्राप्ति हेतु विद्रोह नहीं किया गया था कारण न तो ब्रिदोही सिपाहियों और न ही आम जनता के बीच अपने राजनीतिक आत्मनिर्णय को प्राप्त करने के लिए एक सामान्य आदर्श था।

विद्रोह के अवसर पर जिस धारणा से अभिप्रेरित होकर लोगों ने भाग लिया था वह स्वभाव से ही स्वार्थी था। हिन्दुओं ने अपने जातीय व धार्मिक हस्तक्षेपों के प्रतिक्रियास्वरूप इस विद्रोह में भाग लिया था तो मुसलमानों ने धर्म का अस्तित्व खतरे में है की हल्ला मचायी। मुस्लिम शासक वर्ग के लोगों ने विद्रोह में इसलिए भाग लिया था ताकि वे भारत में मुस्लिम सत्ता की पुनर्स्थापना कर सकें। भूस्वामियों और तालुकेदारों के विद्रोह में भाग लिये जाने का मूल कारण सिविल न्यायालयों के निर्णयों को बदलना एवं निलामी क्रेताओं से अपनी जमीनों की वापसी करना था। वहीं दूसरी ओर शहरी बदमाशों, अभियोगियों, ग्रामीणों और यहाँ तक कि सिपाहियों ने सरकारी खजाने को लूटने, सरकारी कार्यालयों को जलाने एवं राज्य रिकार्डों को बर्बाद करने का उचित अवसर पाकर विद्रोह में सहभागिता निभायी थी। अतः यह राजनीतिक स्वतंत्रता के लिए लड़ा गया युद्ध नहीं था। इसी प्रकार विद्रोह में शामिल प्रमुख नेताओं के उद्देश्यों को निजी स्वार्थों से प्रेरित एवं उनके कार्यों को क्षेत्र–विशेष तक सीमित मानते हुए चट्टोपाध्याय ने बतलाया कि यद्यपि नाना–साहब, रानी लक्ष्मीबाई और कुँवर सिंह जैसे नेताओं ने अपनी व्यक्तिगत दुःखों से परे हटकर युद्ध किया था तो भी यह स्वतंत्रता संग्राम नहीं था।[15]

इस विद्रोह के सम्बन्ध में एच० पी० चट्टोपाध्याय के द्वारा किया गया इतिहास– लेखन किसी एक धारा विशेष का प्रतिनिधित्व नहीं करता बल्कि कई धाराओं का मिला–जुला रूप है। जहाँ सभी वर्गों विशेष तौर पर कृषकों एवं सैनिकों के आर्थिक विक्षोभों का सूक्ष्म विश्लेषण करके चट्टोपाध्याय ने मार्क्सवादी इतिहास–लेखन को दुहराया है और अपने विचार को सावरकर, एस०बी० चौधरी, ताराचंद एवं के०के० दत्त के करीब ला दिया है वहीं दूसरी ओर इनके सामाजिक–धार्मिक हस्तक्षेपों की व्याख्या बहुत हद तक साम्राज्यवादी इतिहास–लेखन के साथ ही सैय्यद अहमद खाँ, आर०सी० मजुमदार एवं एस०एन० सेन जैसे देशी इतिहासकारों के विश्लेषण से प्रभावित है।

संदर्भ :–

1. एच०पी० चट्टोपाध्याय द सिपॉय म्यूटिनी ऑफ 1857: ए सोशल स्टडी एण्ड एनालिसिस (कलकता न. 1957), पृ०–1/डॉ मनोज कुमार – 1857–58 के विद्रोह पर इतिहास लेखन के विविध आयाम : देशी इतिहासकारों के विशेष संदर्भ में, केंद्रीय हिंदी निदेशालय भारत सरकार, पृ० 202।
2. वही, पृ० 2, वही पृ० 203।
3. वही, पृ० 4, वही पृ० 203।
4. वही, पृ० 2, वही पृ० 203।
5. वही, पृ० 5, वही पृ० 203।
6. वही पृ० 159।
7. वही पृ० 9।
8. वही पृ० 21।
9. एच०पी० चट्टोपाध्याय द सिपॉय म्यूटिनी ऑफ 1857 : ए सोशल स्टडी एण्ड एनालिसिस (कलकता न. 1957), पृ०–1/डॉ मनोज कुमार – 1857–58 के विद्रोह पर इतिहास लेखन के विविध आयाम : देशी इतिहासकारों के विशेष संदर्भ में, केंद्रीय हिंदी निदेशालय भारत सरकार, पृ० 29–32।
10. वही पृ० 42–43। वही–डॉ मनोज कुमार पृ० 245–55।
11. वही पृ० 43–45।
12. वही पृ० 50–51।
13. वही पृ० 51–52।
14. वही पृ० 52–53।
15. वही पृ० 60–63।

****